गोरा

अध्याय 18

रविंद्रनाथ टैगोर

गोरा

अध्याय 18

https://www.hindiadda.com/gora-part-xviii/

हरिमोहिनी ने पूछा, "राधारानी, तुमने कल रात को कुछ खाया क्यों नहीं?"

विस्मित होकर सुचरिता ने कहा, "क्यों, खाया तो था।"

हरिमोहिनी ने रात से ज्यों का त्यों ढँका रखा खाना दिखाते हुए कहा, "कहाँ खाया? सब तो पड़ा हुआ है!"

तब सुचरिता ने जाना कि रात खाना खाने का उसे ध्यान ही नहीं रहा।

रूखे स्वर में हरिमोहिनी ने कहा, "यह सब तो अच्छी बात नहीं है। मैं जहाँ तक तुम्हारे परेशबाबू को जानती हूँ, उससे तो मुझे नहीं लगता कि उन्हें इतना आगे बढ़ना पसंद होगा- उन्हें तो देखकर ही मन को शांति मिलती है। आजकल का तुम्हारा रवैय्या उन्हें पूरा मालूम होगा तो वह क्या कहेंगे भला?"

हरिमोहिनी की बात का इशारा किधर है, यह समझने में सुचरिता को कठिनाई नहीं हुई- पहले तो पल-भर के लिए मन-ही-मन वह सकुचा गई। उसने सोचा भी नहीं था कि गोरा के साथ उसके संबंध को बिल्कुल साधारण स्त्री-पुरुषों के संबंध के समान मानकर उस पर ऐसा अपवाद लगाया जा सकता है। इसीलिए हरिमोहिनी के कटाक्ष से वह डर गई। लेकिन अगले ही क्षण हाथ का काम छोड़कर वह सीधी होकर बैठ गई और हरिमोहिनी के चेहरे की ओर एकटक देखने लगी। इसी क्षण से उसने निश्चय कर लिया कि गोरा की बात को लेकर वह किसी के सामने ज़रा भी लज्जित नहीं होगी। वह बोली, "मौसी, तुम तो जानती ही हो, कल गौरमोहन बाबू आए थे। उनसे जो चर्चा हुई उसके विषय में मेरा चित्त इतना डूब गया था कि खाने की बात भूल ही गई थी। तुम कल रात रहतीं तो बहुत-सी नई बातें सुन पातीं।"

जैसी बातें हरिमोहिनी सुनना चाहती थी गोरा की बातें ठीक वैसी नहीं थीं। वह बस भक्ति की ही बातें सुनना चाहती थीं। गोरा के मुँह से भक्ति की बात ऐसी सहज और सरल नहीं जान पड़ती थी। गोरा के सामने जैसे सदा एक विरोध पक्ष रहता था जिससे वह बराबर लड़ता रहता था। जो नहीं मानते उन्हें वह मनवाना चाहता था, किंतु जो मानते हैं उन्हें कहने के लिए उसके पास क्या था? जो बातें गोरा को उत्तेजित करती थीं उनके बारे में हरिमोहिनी बिल्कुल उदासीन थीं। ब्रह्म-समाज के लोग अगर हिंदू-समाज के साथ नहीं मिलते और अपने मत पर स्थिर रहते हैं तो इसमें हरिमोहिनी को कोई आंतरिक क्लेश नहीं होता था। अपने प्रियजनों से अपने विच्छेद का कोई कारण न उठ खड़ा हो तो उन्हें किसी बात की फिक्र नहीं थी। इसीलिए गोरा से बातचीत करके उनके मन को ज़रा भी रस नहीं मिलता था। इस पर

जब से उन्होंने अनुभव किया था कि सुचरिता के मन पर गोरा का ही प्रभाव ज्यादा पड़ रहा है तब से गोरा की बातचीत पूरी तरह स्वाधीन थी और मत-आस्था-आचरण के मामले में भी स्वतंत्र थी, इसीलिए हरिमोहिनी किसी भी दशा में उसे पूरी तरह अपने वश में नहीं कर पाई थीं। लेकिन ढलती आयु में सुचरिता ही हरिमोहिनी का एकमात्र अवलंबन थी इसलिए परेशबाबू को छोड़कर सुचरिता पर और किसी का कोई अधिकार हरिमोहिनी को बहुत विचलित कर देता था। उन्हें एकाएक जान पड़ने लगा कि गोरा की बातें शुरू से आखिर तक कल्पित हैं और उसका असल उद्देश्य किसी-न-किसी तरह धोखे से सुचरिता के मन को अपनी ओर आकृष्ट कर लेना है। यहाँ तक कि यह भी कल्पना वह करने लगीं कि गोरा की लालची दृष्टि मुख्यतया सुचरिता की संपत्ति पर है उन्होंने तय कर लिया कि गोरा ही उनका प्रधान शत्रु है और मन-ही-मन मानो कमर कसकर उसका सामना करने को तैयार हो गईं।

सुचरिता के यहाँ आज गोरा के आने की कोई बात नहीं थी, कोई कारण भी नहीं था। लेकिन गोरा के स्वभाव में दुविधा नाम की चीज़ बहुत कम थी। जब जिस काम में वह प्रवृत्त होता था उसके बारे में ज्यादा सोचता नहीं था, तीर की तरह सीधा चलता जाता था।

आज सबेरे ही गोरा जब सुचरिता के घर पहुँचा तब हरिमोहिनी पूजा कर रही थीं। सुचरिता बैठक में मेज़ पर कागज़-पत्र सँवारकर रख रही थी कि सतीश ने आकर खबर दी, गोराबाबू आए हैं। सुचरिता को विशेष आश्चर्य नहीं हुआ, वह जैसे जानती थी कि गोरा आएगा।

कुर्सी पर बैठकर गोरा ने कहा, "आखिर विनय ने हमें छोड़ दिया?"

सुचरिता ने कहा, "क्यों, छोड़ कैसे दिया? वह तो ब्रह्म-समाज में शामिल नहीं हुए।"

गोरा ने कहा, "वह ब्रह्म-समाज में ही चले गए होते तो हमारे अधिक निकट रहते। उनका हिंदू-समाज से चिपटे रहना ही अधिक दु:ख देने वाला है। इससे तो वह हमारे समाज का बिल्कुल छुटकारा कर देते तभी अच्छा होता।"

मन-ही-मन बहुत दु:ख पाकर सुचरिता ने कहा, "आप समाज को यों अकेला अलग करके क्यों देखते हैं? समाज के ऊपर आप जो इतना अधिक विश्वास रखते हैं वह क्या आपक लिए स्वाभाविक है या कि आप अपने साथ ज़बरदस्ती करके वैसा करते हैं?"

गोरा ने कहा, "इस समय की परिस्थिति में ज़बरदस्ती करना ही स्वाभाविक है। पैरों के नीचे धरती जब डगमगा उठती हैं तब प्रत्येक पग पर अधिक ज़ोर देना ही पड़ता है। इस समय क्योंकि चारों ओर विरोध ही दीखता है, इसलिए हमारी बातों और हमारे व्यवहार में एक अतिरंजना दीखती है, उसे अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता।

सुचरिता ने कहा, "चारों ओर जो विरोध दीखता है उसे आप बिल्कुल गलत और अनावश्यक क्यों समझते हैं? समाज अगर समय की गति में बाधा दे तो उसे चोट सहनी ही होगी।"

गोरा ने कहा, "समय की गति पानी की लहर के समान है, उससे किनारे टूटते रहते हैं, लेकिन उस टूटने को स्वीकार कर लेना ही किनारे का कर्तव्य है, यह मैं नहीं मानता। तुम यह मत समझो कि समाज का भला-बुरा मैं कुछ सोचता ही नहीं। वह सब सोचना तो इतना सरल है कि आजकल के सोलह साल के लड़के भी विचारक बन बैठे हैं। लेकिन मुश्किल है तो समूची चीज़ को श्रध्दा की नज़र से समग्र भाव से देख सकना।"

सुचरिता ने कहा "श्रध्दा के द्वारा क्या हमें सत्य ही मिलता है? उसके द्वारा बिना सोचे-समझे हम मिथ्या को भी तो ग्रहण कर लेते हैं। मैं आपसे एक बात पूछती हूँ- क्या हम लोग मूर्ति पूजा पर भी श्रध्दा कर सकते हैं। आप क्या इस सबको सत्य मानकर उस पर विश्वास करते हैं?"

थोड़ी देर चुप रहकर गोरा बोला, "मैं तुम्हें ठीक-ठीक सच्ची बात कहने की चेष्टा करूँगा। इस सबको मैंने शुरू से ही सत्य मान लिया है। यूरोपीय संस्कार के साथ इसका विरोध है इसीलिए या इसके विरुध्द कई-एक सस्ती दलीलें दी जा सकती हैं इसीलिए मैंने तुरंत उन्हें रद्द नहीं कर दिया। धर्म के बारे में मेरी अपनी विशेष साधना नहीं है, लेकिन मैं आँख बंद करके रटी हुई बात की तरह यह नहीं कह सकता कि साकार-पूजा और मूर्ति-पूजा में कोई अंतर नहीं है या कि भक्ति की एक चरम परिणति नहीं है। शिल्प में, साहित्य में, यहाँ तक कि विज्ञान और इतिहास में भी मनुष्य की कल्पना-वृत्ति का स्थान है, तब एक अकेले धर्म में ही उसका कोई स्थान नहीं है यह बात मैं नहीं मानूँगा। मनुष्य की सभी वृत्तियों का चरम-प्रकाश धर्म में होता है। हमारे देश में मूर्ति-पूजा में ज्ञान और भक्ति के साथ कल्पना का सम्मिलन करने की जो कोशिश हुई, क्या उसी के कारण ही हमारे देश का धर्म मनुष्य के लिए दूसरे देशों के धर्म से अधिक संपूर्ण नहीं हो उठा?'

सुचरिता ने कहा, "ग्रीस और रोम में भी तो मूर्ति-पूजा होती थी।"

गोरा ने कहा, "वहाँ की मूर्तियों में मनुष्य की कल्पना ने जितना सौंदर्य-बोध का आश्रय लिया था उतना ज्ञान-भक्ति का नहीं। हमारे देश में ज्ञान और भक्ति के साथ कल्पना गंभीर रूप से जुड़ी हुई है। हमारे राधा-कृष्ण और शिव-पार्वती मात्र ऐतिहासिक पूजा के विषय नहीं है, उनमें मनुष्य के चिरंतन तत्वज्ञान का रूप है। इसीलिए रामप्रसाद और चैतन्यदेव की भक्ति इन्हीं सब मूर्तियों का अवलंबन करके प्रकट हुई। भक्ति का ऐसा एकांत प्रकाश ग्रीस और रोम के इतिहास में कब देखा गया?"

सुचरिता ने कहा, "समय के परिवर्तन के साथ-साथ धर्म और समाज का कोई परिवर्तन आप स्वीकार करना ही नहीं चाहते?"

गोरा बोला, "क्यों नहीं चाहता? लेकिन वह परिवर्तन पागलपन हो तो नहीं चल सकता। मनुष्य का परिवर्तन मनुष्यत्व की राह पर ही होगा-बच्चा क्रम से बूढ़ा हो जाता है, लेकिन एकाएक मनुष्य कुत्ता-बिल्ली तो नहीं हो जाता। भारतवर्ष का परिवर्तन भारतवर्ष के रास्ते पर ही होना चाहिए,एकाएक अंग्रेजी इतिहास का मार्ग पकड़ लेने से एक सिरे से दूसरे तक सब पंगु और निरर्थक हो जाएगा। देश की शक्ति, देश का ऐश्वर्य सब देश में ही संचित है, यही तुम सबको बताने के लिए ही मैंने अपना जीवन अर्पित किया है। मेरी बात समझ तो रही हो?"

सुचरिता ने कहा, "हाँ, समझ रही हूँ। लेकिन मैंने ये सब बातें पहले कभी नहीं सुनी, और सोची भी नहीं। नई जगह पहुँचे जाने पर जैसे किसी स्पष्ट चीज़ से परिचित होते भी देर लगती है, वैसी ही स्थिति मेरी है। या शायद मैं स्त्री हूँ, इसीलिए मुझे पूरी उपलब्धि नहीं हो रही है।"

गोरा बोल उठा, "बिल्कुल नहीं, मैं तो बहुत-से ऐसे पुरुषों को जानता हूँ, यह सब चर्चा उनके साथ बहुत दिनों से करता आ रहा हूँ- वे लोग नि:संशय होकर यह निश्चय किए बैठे हैं कि अपने मन के सामने तुम जो देख पा रही हो उनमें से कोई ज़रा-सा भी नहीं देख पाया। तुममें वह गहरी सूक्ष्म दृष्टि है, यह मैंने तुम्हें देखते ही अनुभव किया था, इसीलिए मैं अपनी इतने दिनों की मन की सब बातें लेकर तुम्हारे पास आता रहा हूँ, अपना सारा जीवन मैंने तुम्हारे सामने खोलकर रख दिया है, ज़रा भी संकोच नहीं किया।"

सुचरिता ने कहा, "जब आप ऐसी बात करते हैं तब मेरा मन बहुत व्यथित हो उठता है। मुझसे आप क्या आशा करते हैं, मैं उसमें से क्या दे सकती हूँ, मुझे क्या काम करना होगा, मेरे भीतर जो भाव उमड़ रहे हैं उन्हें कैसे प्रकट करूँ, कुछ भी तो मैं समझ नहीं पाती। यही भय लगा रहता है कि मुझ पर आपने जितना विश्वास किया है एक दिन कहीं आपको यही न लगे कि वह भूल थी।"

गंभीर स्वर में गोरा ने कहा, "उसमें कहीं भूल नहीं है तुम्हारे भीतर कितनी बड़ी शक्ति है, यह मैं तुम्हें दिखा दूँगा। तुम ज़रा भी मत घबराओ- तुम्हारी जो योग्यता है उसे प्रकाश में ले आने का भार मुझ पर है, तुम मुझ पर भरोसा रखो।"

सुचरिता ने कुछ नहीं कहा, लेकिन बिना कहे भी यह बात व्यक्त हो गई कि भरोसा रखने में उसने कहीं कोई कसर नहीं रखी है। गोरा भी चुप रहा। बहुत देर कमरे में सन्नाटा रहा। बाहर गली में पुराने बर्तन वाला पीतल का बर्तन झनझनाता हुआ दरवाजे पर हाँक लगाकर चला गया।

अपनी पूजा समाप्त करके हरिमोहिनी रसोईघर की ओर जा रही थी। सुचरिता के नि:शब्द कमरे में कोई है, इसका उन्हें ज्ञान भी नहीं था। लेकिन अचानक कमरे की ओर नज़र उठने पर जब उन्होंने देखा कि सुचरिता और गोरा चुप बैठे कुछ सोच रहे हैं, दोनों में से कोई शिष्टाचार की भी कोई बात नहीं कर रहा है, तब पल-भर के लिए उनके क्रोध की लहर बिजली-सी ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँच गई। किसी तरह अपने को सँभालकर उन्होंने दरवाजे पर खड़े-खड़े पुकारा, "राधारानी!"

सुचरिता के उठकर उनके पास आने पर उन्होंने मृदु स्वर में कहा, "आज एकादशी है, मेरी तबीयत ठीक नहीं है, तुम ज़रा रसोई में जाकर जलाओ, तब तक मैं थोड़ी देर गौर बाबू के पास बैठूँ।"

सुचरिता मौसी का भाव देखकर चिंतित-सी रसोई की ओर चली गई। हरिमोहिनी के कमरे में आने पर गोरा ने उन्हें प्रणाम किया। वह कुछ कहे बिना कुर्सी पर बैठ गईं। थोड़ी देर तक ओंठ भींचकर चुप बैठे रहने के बाद उन्होंने कहा, "तुम तो ब्रह्म नहीं हो न?"

गोरा ने कहा, "नहीं।"

हरिमोहिनी ने पूछा, "हमारे हिंदू-समाज को तो तुम मानते हो?"

गोरा ने कहा, "ज़रूर मानता हूँ।"

हरिमोहिनी बोलीं, "ज़रूर मानता हूँ।"

हरिमोहिनी बोलीं, "तब तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है?"

हरिमोहिनी का अभिप्राय समझ न पाकर चुपचाप गोरा उनका मुँह ताकता रहा।

हरिमोहिनी ने कहा, "राधारानी सयानी हो गई है तुम लोग तो उसके सगे नहीं हो, उसके साथ तुम्हें इतनी क्या बात करनी होती है? वह लड़की है, उसे घर का काम-काज भी करना होता है, उसे भी इतनी बातें करने की क्या ज़रूरत है? इनसे तो उसका मन दूसरी तरफ चला जाएगा। तुम तो ज्ञानी आदमी हो, सारा देश तुम्हारी प्रशंसा करता है- लेकिन यह सब हमारे देश में कब होता था, और किस शास्त्र में ऐसा लिखा है?"

गोरा को भारी ठेस लगी। इस तरह की बात सुचरिता के संबंध में कहीं से उठ सकती है यह उसने सोचा भी न था। थोड़ी देर चुप रहकर वह बोला, "वे ब्रह्म-समाज में है, उन्हें इसी तरह बराबर सबसे मिलते-जुलते देखता रहा हूँ, इसीलिए मुझे कुछ खयाल ही नहीं हुआ।"

हरिमोहिनी ने कहा, "अच्छा, वही ब्रह्म-समाज में सही, किंतु तुम तो इस सबको कभी अच्छा नहीं कहते। तुम्हारी बातें सुनकर आजकल के कितने ही लोगों को होश आ गया है, तुम्हारा ही व्यवहार ऐसा होगा तो लोग तुम्हारी क्यों सुनेंगे? अभी कल देर रात तक तुम उसके साथ बातें करते रहे, तब भी तुम्हारी बात खत्म नहीं हुई और आज फिर सबेरे से ही आ जुटे। सबेरे से वह न भंडारे में गई है, न रसोई में; आज एकादशी के दिन मेरी ही कुछ मदद कर दे इसका भी खयाल उसे नहीं आया, यह उसकी कैसी पढ़ाई हो रही है? तुम्हारे घर में भी तो लड़कियाँ हैं- उन्हें भी क्या तुम सब काम-काज छुड़ाकर ऐसी ही शिक्षा दे रहे हो, या और कोई दे तो तुम्हें उचित लगेगा?"

इन सब बातों का गोरा की ओर से क्या जवाब हो सकता था! उसने केवल इतना कहा, "उन्हें ऐसी ही शिक्षा मिलती रही है, इसीलिए मैंने इन सब बातों के बारे में विचार नहीं किया।"

हरिमोहिनी ने कहा, "उसे चाहे कैसी भी शिक्षा मिलती रही हो, जब तक वह मेरे पास है और जब तक मैं जीती हूँ तब तक यह सब नहीं चलेगा। उसे मैं बहुत कुछ ठीक रास्ते पर ले आई हूँ। जब वह परेशबाबू के यहाँ थी तभी यह शोर मचने लगा था कि मेरे साथ रहकर वह हिंदू हो गई है। फिर इस घर में आकर तुम्हारे विनय के साथ न जाने क्या कुछ बातें होती रहीं कि फिर सब उलट गया। वह तो अब ब्रह्म घर में ब्याह करने चले हैं। खैर, मुश्किल से तो विनय से छुटकारा मिला। फिर एक कोई हरानबाबू आते थे, वह जब आता तब मैं राधारानी को लेकर ऊपर अपने कमरे में चली जाती, इसलिए उसकी भी नहीं चली। इसी तरह बड़ा प्रयत्न करके अब लगता है कि इसकी मति फिर कुछ सुधरने लगी है। इस घर में आकर तो उसने फिर सबका छुआ खाना शुरू कर दिया था, कल देखा वह फिर बंद कर दिया है। कल रसोई से अपना खाना अपने आप ले गई, बैरे को पानी लाने से मना कर दिया। अब, भैया तुमसे हाथ जोड़कर विनती करती हूँ, तुम अब फिर उसे मत बिगाड़ो। दुनिया में मेरे जो कोई थे सब मर गए, वही एक बची है, उसका भी मेरे अलावा कोई अपना नहीं है। तुम लोग उसे छोड़ दो। उनके घर में और भी तो बड़ी-बड़ी लड़कियाँ हैं- लावण्य है,लीला है, वे भी तो बुध्दिमती हैं, पढ़ी-लिखी हैं, तुम्हें कुछ कहना ही हो तो उन्हें जाकर कहो, कोई तुम्हें मना नहीं करेगा।"

गोरा एकदम स्तंभित होकर बैठा रहा। थोड़ा रुककर हरिमोहिनी फिर बोलीं, "तुम्हीं सोचो, उसे तो शादी-ब्याह भी करना होगा- उम्र भी काफी हो गई है। तुम क्या समझते हो कि बुढ़ापे तक वह ऐसे ही बैठी रहेगी? लड़कियों को घर का काम-काज तो करना ही होता है।"

साधारणतया इस बारे में गोरा को कोई संदेह नहीं था, उसकी भी तो यही राय थी, लेकिन सुचरिता के बारे में मन-ही-मन अपने मत को मानते हुए भी कभी लागू करके नहीं देखा था। सुचरिता गृहिणी होकर किसी एक गृहस्थी के अंत:पुर में घर के काम-काज में लगी हुई हो, यह उसने कभी कल्पना में भी नहीं सोचा था। मानो सुचरिता अब जैसी है हमेशा वैसी ही रहेगी।

गोरा ने पूछा, "अपनी भानजी के विवाह के बारे में आपने कुछ सोचा है क्या?"

हरिमोहिनी ने कहा, "सोचना तो होता ही है। मैं नहीं तो और कौन सोचेगा?"

गोरा ने फिर पूछा, "उनका विवाह क्या हिंदू-समाज में हो सकेगा?"

हरिमोहिनी ने कहा, "उसकी कोशिश तो करनी होगी। वही और गड़बड़ न करे और ठीक ढंग से रहे, तो काम अच्छी तरह बन जाएगा। वह सब मैंने मन-ही-मन ठीक कर रखा है। बीच में तो उसके जो ढंग थे उनको देखते हुए मुझे कोई पक्का फैसला करने का साहस नहीं हो रहा था। दो दिन से अब फिर देख रही हूँ कि उसका मन कुछ नरम पड़ गया है, इसलिए फिर भरोसा होता है।"

गोरा ने सोचा कि इस बोर में और अधिक कुछ पूछना उचित नहीं है, लेकिन पूछे बिना न रह सका, "पात्र क्या आपने मन में सोच रखा है?"

हरिमोहिनी ने कहा, "सोचा तो है। पात्र अच्छा ही है- मेरा छोटा देवर कैलाश। उसकी बहू कुछ दिन हुए मर गई; मनपसंद लड़की न मिलने से अब तक बैठा है, हीं तो ऐसा लड़का क्या यों ही पड़ा रहता है? राधारानी के साथ ठीक जँचेगा।"

ज्यों-ज्यों गोरा के मन में सुई-सी चुभने लगी त्यों-त्यों कैलाश के बारे में वह और प्रश्न पूछता गया।

हरिमोहिनी के देवरों में एक कैलाश ने ही कठिन परिश्रम करके कुछ आगे तक पढ़ाई-लिखाई की थी-कहाँ तक, यह हरिमोहिनी नहीं बता सकती थीं। कुनबे में उसी को विद्वान माना जाता था। गाँव के पोस्टमास्टर के खिलाफ सदर में दरखास्त भेजते समय कैलाश ने ही ऐसी ज़बरदस्त अंग्रेजी में लिख दिया था कि पोस्ट ऑफिस के कोई एक बड़े बाबू स्वयं जाँच-पड़ताल के लिए आए थे। इससे गाँव के सभी लोग कैलाश की योग्यता से काफी प्रभावित हो गए थे। इतनी शिक्षा होने पर भी आचार और धर्म के मामले में कैलाश की निष्ठा ज़रा भी कम नहीं हुई थी।

कैलाश का पूरा परिचय जान लेने के बाद गोरा चलने को उठ खड़ा हुआ। हरिमोहिनी को प्रणाम करके और कुछ कहे बिना वह घर से बाहर हो गया।

गोरा जब सीढ़ी से ऑंगन की ओर उतर रहा था तब सुचरिता ऑंगन के दूसरी ओर रसाई के काम में लगी थी। गोरा के पैरों की आवाज़ सुनकर वह द्वार के पास आकर खड़ हो गई। लेकिन किसी ओर देखे बिना गोरा बाहर चला गया। एक लंबी साँस लेकर सुचरिता फिर रसोई के काम में आ जुटी। गली के मोड़ पर ही गोरा की हरानबाबू से मुठभेंड़ हो गई। हरानबाबू ने थोड़ा हँसकर कहा, "आज बड़े सबेरे निकल पड़े!"

गोरा ने कोई उत्तर नहीं दिया। हरानबाबू ने फिर थोड़ा हँसकर पूछा, "वहीं गए थे शायद! सुचरिता घर पर तो है?"

गोरा ने "हाँ" कहा, और दनदनाता हुआ आगे बढ़ गया।

सुचरिता के घर में घुसते ही हरानबाबू ने सामने रसोई के खुले द्वार से सुचरिता को देख लिया। सुचरिता को भाग जाने का रास्ता न था, मौसी भी पास में ही थीं।

हरानबाबू ने पूछा, "गौरमोहन बाबू से अभी-अभी भेंट हुई। वह अब तक यहीं थे शायद?"

उन्हें सुचरिता ने कोई जवाब नहीं दिया, सहसा बर्तनों से इतनी व्यस्त हो उठी जैसे उसे साँस लेने की भी फुर्सत नहीं है। लेकिन हरानबाबू इससे हार मानने वाले नहीं थे। उन्होंने रसोई के बाहर ऑंगन में ही खड़े-खड़े बातचीत शुरू कर दी। सीढ़ी के पास आकर हरिमोहिनी ने दो-तीन बार खाँसा भी, लेकिन उसका कोई असर नहीं हुआ। हरिमोहिनी हरानबाबू के सामने भी आ सकती थीं, लेकिन उन्होने समझ लिया था कि एक बार उनके हरानबाबू के सामने आ जाने पर इस उद्यमी युवक के उत्साह से इस घर में उनका या सुचरिता का बचना मश्किल हो जाएगा। इसीलिए हरानबाबू की छाया देखकर भी वह इतना लंबा घूँघट निकाल लेती थीं। जो उनकी नव-वधू अवस्था में भी आवश्यकता से अधिक ही समझा जाता।

हरानबाबू बोले, "सुचरिता, तुम किधर जा रही हो ज़रा सोचो तो? कहाँ जाकर पहुँचोगी? तुमने यह तो सुन ही लिया होगा कि ललिता के साथ विनय बाबू का ब्याह हिंदू पध्दति से होगा। इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है, जानती हो?"

सुचरिता की ओर से कोई जवाब न पाकर हरानबाबू ने धीमे और गंभीर स्वर में कहा, "तुम ज़िम्मेदार हो।"

हरानबाबू ने सोचा था कि इतने तीखे और भयानक अभियोग की चोट सुचरिता कभी नहीं सह सकेगी। लेकिन वह बिना बोले अपना काम करती रही, यह देखकर उन्होंने स्वर और भी गंभीर करके उँगली उठाकर सुचरिता की ओर हिलाते हुए कहा, " सुचरिता, मैं फिर कहता हूँ, ज़िम्मेदार तुम हो। क्या तुम दिल पर हाथ रखकर कह सकती हो कि इसके लिए तुम समूचे ब्रह्म-समाज के निकट अपराधी नहीं हो?"

सुचरिता ने चुपचाप कढ़ाई चूल्हे पर रख दी, उसमें तेल छनछनाने लगा।

हरान बाबू कहते रहे, "तुम्हीं विनय बाबू और गौरमोहन बाबू को अपने घर में लाईं और तुम्हीं ने इनको इतना बढ़ावा भी दे दिया कि आज वे दोनों तुम्हारे ब्रह्म-समाज के सभी मान्य-बंधुओं से भी बड़े हो गए हैं। इसका क्या नतीजा हुआ, देख ही रही हो। क्या शुरू से ही मैंने बार-बार सावधान नहीं किया? आज क्या हुआ है? अब ललिता को कोन रोकेगा? तुम सोचती हो कि ललिता के साथ ही मुसीबत टल गई, किंतु वैसा नहीं है। आज मैं तुम्हें सावधान करने आया हूँ, अब तुम्हारी बारी है। आज ललिता की दुर्घटना से तुम्हें ज़रूर मन-ही-मन पछतावा हो रहा होगा, लेकिन वह दिन दूर नहीं है जब अपने ही अध:पतन पर तुम्हें पछतावा तक न होगा। लेकिन सुचरिता, अब भी लौटने का समय है। एक बार सोचकर देखो; एक दिन कितनी बड़ी, कितनी महान आशा के साथ हम दोनों मिले थे। हमारे सामने जीवन का कर्तव्य कैसा उज्ज्वल था, ब्रह्म-समाज का भविष्य किस उदार भाव से खुल रहा था, हमारे कितने संकल्प थे और रोज़ाना हम लोग कितना संबल जुटा रहे थे! तुम क्या समझती हो, वह सब खत्म हो गया?कदापि नहीं। हमारा वह आशा का क्षेत्र आज भी वैसा ही प्रस्तुत है- एक बार पलटकर देखो तो। एक बार लौट तो आओ।"

उस समय खौलते तेल में कई तरकारियाँ जोरों से छनछनाने लगी थीं और सुचरिता उन्हें कौशल से पलट रही थी। जब हरानबाबू अपने प्रवचन का परिणाम जानने के लिए चुप हुए तो सुचरिता ने आग पर से कढ़ाई नीचे उतारकर उनकी ओर मुड़कर दृढ़ स्वर में कहा, "मैं हिंदू हूँ।"

बिल्कुल हतबुध्दि होकर हरानबाबू ने कहा, "तुम हिंदू हो?"

सुचरिता ने दोहराया, "हाँ, मैं हिंदू हूँ।" और कढ़ाई को फिर आग पर चढ़ाकर तरकारियों को चलाने लगी।

क्षण-भर में सँभलकर हरानबाबू ने तीखे स्वर में कहा, "तभी शायद गौरमोहन बाबू सबेरा हो, संध्या हो, तुम्हें दीक्षा देते रहते हैं?"

मुँह उधर मोड़े बिना ही सुचरिता ने कहा, "हाँ, मैंने उन्हीं से दीक्षा ली है, वही मेरे गुरु हैं।"

एक समय से हरानबाबू अपने को ही सुचरिता का गुरु समझते आ रहे थे। आज सुचरिता के मुँह से यह सुनकर भी कि वह गोरा से प्रेम करती है, उन्हें इतना कष्ट न होता जितना गुरु वाली बात से हुआ। उनका गुरु का अधिकार आज गोरा ने छीन लिया है, सुचरिता की यह बात उन्हें तीर-सी चुभी।

उन्होंने कहा, "तुम्हारे गुरु चाहे जितने बड़े हों, तुम क्या समझती हो कि हिंदू-समाज तुम्हें ग्रहण कर लेगा?"

सुचरिता ने कहा, "वह सब मैं कुछ नहीं समझती। मैं समाज भी नहीं जानती। मैं बस इतना जानती हूँ कि मैं हिंदू हूँ।"

हरानबाबू ने कहा, "क्या तुम यह जानती हो कि तुम इतने दिनों तक अविवाहित रही हो केवल इसी बात पर तुम हिंदू-समाज से जातिच्युत कर दी जा सकती हो?"

सुचरिता ने कहा, "इस बारे में आप फिजूल चिंता न करें, लेकिन मैं आपसे इतना ही कहती हूँ कि मैं हिंदू हूँ।"

हरानबाबू ने कहा, "जो धर्म-शिक्षा परेशबाबू से मिली थी वह भी क्या अपने इस नए गुरु के चरणों पर न्यौछावर कर दी?"

सुचरिता ने कहा, "मेरा धर्म मेरे अंतर्यामी जानते हैं, इसके बारे में मैं किसी के साथ कोई बहस नहीं करना चाहती। आप यही जानिए कि मैं हिंदू हूँ।"

अब हरानबाबू बिल्कुल लिमिला उठे और बोले, "तुम चाहे कितनी बड़ी हिंदू हो जाओ- उससे कोई शुभ नतीजा नहीं निकलेगा, यह मैं तुम्हें बता दूँ। तुम्हारे गौरमोहन बाबू विनयबाबू जैसे नहीं हैं। तुम अपने को हिंदू-हिंदू पुकारकर गला फाड़ लो तब भी यह आशा न करना कि गौर बाबू तुम्हें अपना लेंगे। चेले बनाकर गुरुगीरी करना आसान है, लेकिन इसी से वह तुम्हें घर ले जाकर गृहस्थी चलाएँगे, यह बात सपने में भी मत सोचना!"

सुचरिता रसोई भूलकर बिजली की तरह तड़पककर खड़ी हो गई और बोली, "यह सब बात क्या कह रहे हैं?"

"मैं कह रहा हूँ कि गौरमोहन बाबू कभी तुमसे विवाह नहीं करेंगे।"

सुचरिता की ऑखें लाल हो उठीं। वह बोली, "विवाह मैंने आपसे कहा नहीं कि वह मेरे गुरु हैं?"

हरानबाबू ने कहा, "वह तो कहा लेकिन जो नहीं कहा वह भी तो हम समझ सकते हैं।"

सुचरिता ने कहा, "आप यहाँ से चले जाइए। मेरा अपमान मत कीजिए। मै। आपसे कहे देती हूँ कि आज से मैं आपके सामने कभी नहीं आऊँगी।"

हरानबाबू ने कहा, "हाँ, सामने कैसे आओगी! अब से तो तुम जनाने में रहोगी। हिंदू रमणी! बंधिता! परेशबाबू के पाप का घड़ा अब भर गया। बुढ़ापे में अब वह अपनी करनी का फल भोगते रहें- हम तो विदा लेते हैं।"

धड़ाक से सुचरिता ने रसोई का दरवाज़ा बंद कर दिया और फर्श पर बैठ गई। मुँह में ऑंचल ठूँसकर किसी तरह अपनी सिसिकियों को दबाने की कोशिश करने लगी। हरानबाबू मानो कालिखपुता चेहरा लिए बाहर को चल दिए।

हरिमोहिनी ने दोनों की पूरी बात सुन ली थी। आज सुचरिता के मुँह से उन्होंने जो सुना वह उनकी उम्मीद से परे था। उनकी छाती खुशी से फूल उठी। उन्होंने सोचा-क्यों न होता, मैं जो सचे मन से अपने गोपी-वल्लभ की पूजा करती आई वह क्या सब यों ही चली जाएगी?

फौरन हरिमोहिनी ने अपने पूजा-गृह में जाकर फर्श पर लेटकर देवता को शाष्टांग प्रणाम किया और प्रण किया कि आज से वह भोग और भी बढ़ा देंगी। अब तक उनकी पूजा दु:ख की सांत्वना के लिए होने के कारण शांत-भाव से होती थी, आज उसके स्वार्थ-साधना का रूप लेते ही वह अत्यंत उग्र और क्षुधातुर हो उठी।

गोरा ने जिस ढंग से सुचरिता से बात की थी, उस तरह पहले कभी किसी से नहीं की थी। अपने श्रोताओं के सामने अब तक वह केवल अपने वाक्य,मत और उपदेश ही रखता आया था, अब सुचरिता के सामने उसने स्वयं अपने को निकालकर रख दिया था। इस आत्म-प्रकाश के आनंद में उसके सारे मत और संकल्प न केवल एक शक्ति से बल्कि एक रस से भर उठे। एक सौंदर्यश्री ने उसके जीवन को छा लिया। मानो उसकी तपस्या पर सहसा देवताओं ने अमृत बरसा दिया हो।

गोरा पिछले कुछ दिनों से रोज़ाना इसी आनंद के आवेश से भरकर कुछ सोचे बिना सुचरिता के पास आता रहा था। किंतु आज हरिमोहिनी की बात सुनकर एकाएक उसे याद आया कि ऐसी ही मुग्धता के लिए एक दिन उसने विनय का कैसा मजाक उड़ाया था और तिरस्कार किया था। आज अनजाने ही स्वयं उसी परिस्थिति में आकर वह चौंक उठा। अनजान जगह में बेहोश सोता हुआ व्यक्ति धक्का खाकर जैसे हड़बड़ाकर उठता है वैसे ही गोरा अपनी सारी शक्ति लगाकर अपने को सजग करने लगा। बराबर वह प्रचार करता आया था कि पृथ्वी पर अनेक प्रबल जातियों का

संपूर्ण विनाश हो गया-भारत ही केवल संयम और दृढ़ता से नियम पालन के चलते सदियों से प्रतिकूल शक्तियों के आघात सहता हुआ भी अपने को बचाय रख सका है। उस नियम में थोड़ी-सी भी शिथिलता स्वीकार करने को वह राज़ी नहीं था। उसका कहना था, भारतवर्ष का सभी कुछ लूटा जा रहा है, लेकिन अपने जिस प्राण पुरुष को उसने इस सब कड़े नियम-संयम के भीतर छिपाकर रखा है उस तक किसी अत्याचारी राजा का वार पहुँच ही नहीं सकता। हम लोग जब तक दूसरी जाति के अधीन हैं तब तक हमें अपने नियम का और भी दृढ़तापूर्वक पालन करना होगा। अच्छे-बुरे के विवेचन का समय अभी नहीं है। जो व्यक्ति भँवर में फँसकर मृत्यु के मुँह की ओर बहा जा रहा हो वह जिस किसी चीज़ के सहारे अपने को बचा सकता हो उसी को पकड़ता है, यह नहीं सोचता कि वह चीज़ सुंदर है या कुरुप। हमेशा से गोरा यही बात कहता आया था- आज भी उसके पास कहने को यही था। हरिमोहिनी ने जब गोरा के आचरण की बुराई की, तब जैसे अंकुश की चोट से गरज तड़ उठा।

गोरा जब अपने घर पहुँचा तब दरवाजे क़े सामने सड़क पर बेंच डालकर महिम नंगे बदन बैठे तम्बाकू खा रहे थे। आज उनके ऑफिस की छुट्टी थी। गोरा को भीतर जाते देखकर उन्होंने भी उसके पीछे जाकर पुकारकर कहा, "गोरा, मेरी एक बात सुनते जाओ!"

गोरा को अपने कमरे में ले जाकर महिम ने पूछा, "बुरा मत मानना भाई, पहले पूछ लूँ कि कहीं तुम्हें भी विनय की छूत तो नहीं लग गइ?उस इलाके में बार-बार आना-जाना होने लगा है।"

गोरा का चेहरा लाल हो उठा। वह बोला, "कोई भय नहीं है।"

महिम ने कहा, "जैसे ढंग देखता हूँ, कुछ कहा नहीं जा सकता। तुम सोचते हो वह एक खाने की चीज़ है जिसे मजे से निगलकर फिर लौटाया जा सकेगा। लेकिन उसी के भीतर काँटा लगा है, यह अपने दोस्त की हालत देखकर ही समझ सकते हो। अरे, चले कहाँ-असल बात तो अभी मैंने कहीं ही नहीं। ब्रह्म लड़की के साथ विनय का ब्याह तो सुनता हूँ बिल्कुल पक्का हो गया है। लेकिन उसके बाद उनके साथ हमारा किसी तरह का मेल-व्यवहार नहीं चल सकता। यह मैं तुम्हें पहले से ही कहे रखता हूँ।"

गोरा ने कहा, "वह तो नहीं ही चल सकता।"

महिम ने कहा, "लेकिन माँ अगर गोलमाल करेंगी तो मुश्किल होगी। हम लोग गृहस्थ हैं, यों ही बेटे-बेटियों के ब्याह में प्राण मुँह को आ जाते हैं, उसके ऊपर अगर घर में ही ब्रह्म-समाज बैठ जाएगा तब तो तुझे यहाँ से बोरिया-बिस्तर उठा लेना पड़ेगा।"

गोरा ने कहा, "नहीं, वह सब कुछ नहीं होगा।"

महिम ने कहा, "शशि के विवाह का मामला तय हो चला है। हमारे समधी जितने वजन की लड़की लेंगे उससे कुछ अधिक सोना लिए बिना नहीं छोड़ेंगे, क्योंकि वह जानते हैं कि मनुष्य तो नश्वर पदार्थ है, सोना उससे अधिक दिन टिकता है। दवा की अपेक्षा अनुपात की ओर ही उनका रूझान अधिक है। उसे समधी कहना तो उसकी हेठी करना है- वह तो एकदम बेहया है! खैर, खर्च तो बहुत होगा, लेकिन उससे जो सबक मिला है वह लड़के के ब्याह के समय काम आएगा। मेरा तो मन होता है, एक बार फिर से इस ज़माने में जन्म लेकर बाबा को बीच में रखकर अपना ब्याह बाकायदा तय करूँ- अपने पुरुष जन्म को एकदम सोलह आने सार्थक करके दिखाऊँ! यही तो पौरुष है-लड़की के बाप को एकबारगी पछाड़ देना क्या मामूली बात है! तुमने जो कहो, तुम्हारे साथ मिलकर दिन-रात हिंदू-समाज की जयध्वनि करने लायक जोश किसी तरह नहीं जुट पाता, भाई, गले से आवाज़ ही नहीं निकलती। मेरी तीन कोड़ी की उमर होने में कुल चौदह महीने बाकी हैं- पहली लड़की को जन्म देने की भूल का सुधार करने में सहधर्मिणी ने लंबा समय लिया-लेकिन जो हो उसके विवाह का समय होने तक सब लोग मिलकर हिंदू-समाज को जीवंत रखो, उसके बाद देश के लोग चाहे मुसलमान हों चाहे ख्रिस्तान, मुझे कोई मतलब नहीं।"

गोरा को उठकर खड़े होते देख महिम बोले, "मैं इसीलिए कह रहा था, कि शशि के विवाह पर विनय को निमंत्रण देने से नहीं चलेगा। उस वक्त इस बात को लेकर फिर कोई हंगामा मचे, यह नहीं होने देना होगा। माँ को तुम अभी से सावधान कर रखना।"

गोरा ने माँ के कमरे में जाकर देखा आनंदमई फर्श पर बैठी ऑखों पर चश्मा चढ़ाए एक खाते में न जाने किस चीज़ की सूची बना रही हैं। गोरा को देखकर चश्मा उतारकर उन्होंने खाता बंद करते हुए कहा, "बैठ।"

गोरा के बैठ जाने पर आनंदमई बोलीं, "मुझे तेरे साथ कुछ सलाह करनी है। विनय के ब्याह की खबर तो सुन ली है न?"

गोरा चुप रहा। आनंदमई बोलीं, "विनय के चचा नाराज़ हैं, वे लोग कोई नहीं आएँगे। उधर यह विवाह परेशबाबू के घर पर हो सकेगा इसमें भी संदेह है। सब इंतजाम विनय को ही करना होगा, इसीलिए मैं सोचती थी, हमारे घर के उत्तर वाले हिस्से में निचली मंज़िल तो किराए पर चढ़ी हुई है लेकिन ऊपर वाले किराएदार चले गए हैं- वहीं दुमंज़िले में यदि ब्याह का बंदोबस्त कर दिया जाए तो कैसा रहेगा?"

गोरा ने पूछा, "क्या यह ठीक रहेगा?"

आनंदमई बोलीं, "मैं न होऊँगी तो ब्याह का सारा काम कौन सँभालेगा? वह तो बेचारा मुसीबत में पड़ जाएगा। वहाँ ब्याह की बात हो जाए तो मैं इस घर से ही सारा इंतज़ाम कर दे सकूँगी, अधिक दौड़-धूप नहीं करनी पड़ेगी।"

गोरा ने कहा, "वह नहीं हो सकेगा माँ!"

आनंदमई ने पूछा, "क्यों नहीं हो सकेगा? उनसे तो मैंने पूछ लिया है।"

गोरा ने कहा, "नहीं माँ, यह ब्याह नहीं हो सकेगा-मैं कहता हूँ, तुम मेरी बात मानो।"

आनंदमई ने कहा, "क्यों, विनय उनके मतानुसार तो ब्याह नहीं कर रहा है।"

गोरा ने कहा, "यह सब बहस की बात है। समाज के सामने यह दलील नहीं चलेगी। विनय की जो इच्छा है करे, हम लोग इस ब्याह को नहीं मान सकते। कलकत्ता शहर में घरों की कोई कमी नहीं है- और उसका अपना भी तो घर है।"

घर बहुत मिल सकते हैं, यह आनंदमई भी जानती थीं। लेकिन विनय सभी बंधु-परिजनों से परित्यक्त होकर अनाथों की तरह किसी किराए के घर में विवाह-संस्कार पूरा करे, यही उनके मन को अखर रहा था। इसीलिए उन्होनें मन-ही-मन सोच लिया था कि उनके मकान का जो हिस्सा किराए के लिए खाली पड़ा है वहीं विनय के विवाह की व्यवस्था कर दी जाए। इससे समाज से कोई झगड़ा मोल लिए बिना वह अपने ही घर में शुभ-कर्म का अनुष्ठान करके तृप्त हो सकेंगी।

उन्होंने गोरा की दृढ़ आपत्ति जानकर लंबी साँस लेकर कहा, "तुम जब इतने ही विरुध्द हो तब तो कहीं और ही मकान किराए पर लेना होगा। लेकिन उससे मुझ पर बहुत बोझ पड़ेगा। खैर, जब यह हो ही नहीं सकता तब इसके बारे में और सोचकर क्या होगा!"

गोरा ने कहा, "माँ, इस ब्याह में तुम्हारे शामिल होने से कैसे चलेगा।"

आनंदमई ने कहा, "यह तू क्या कह रहा है, गोरा! अपने विनय के ब्याह में मैं शामिल न होऊँगी तो कौन होगा!"

गोरा ने कहा, "वह किसी तरह नहीं हो सकेगा, माँ!"

आनंदमई ने कहा, "गोरा, विनय के साथ तेरा मतभेद हो सकता है, लेकिन इसीलिए क्या तू उसका दुश्मन हो जाएगा?"

कुछ उत्तेजित होकर गोरा ने कहा, "माँ, यह कहना तुम्हारी ज्यादती है। आज विनय के ब्याह में मैं जो खुशी-खुशी शामिल नहीं हो पा रहा हूँ,मेरे लिए यह कोई सुख की बात नहीं है। विनय को मैं कितना प्यार करता हूँ यह और कोई चाहे न जाने, पर तुम तो जानती हो। लेकिन माँ, यह प्यार की बात नहीं है, इसमें दोस्ती-दुश्मनी कुछ नहीं है। विनय ने परिणाम की बात सोच-समझकर ही इधर कदम बढ़ाया है। हमने उसे नहीं छोड़ा,उसी ने हमें छोड़ दिया है, इसलिए अब जो विच्छेद हो रहा है उससे उसको ऐसी कोई चोट नहीं पहुँचेगी जिसके लिए वह तैयार न हो।"

आनंदमई ने कहा, "गोरा, यह बात तो ठीक है कि विनय यह जानता है कि उस विवाह के मामले में तुम्हारा उसके साथ किसी तरह का सहयोग नहीं होगा। लेकिन यह भी तो वह निश्चय जानता है कि मैं इस शुभ कर्म में किसी तरह उसका परित्याग नहीं कर सकूँगी। विनय अगर समझता कि उसकी बहू को मैं आशीर्वाद-पूर्वक ग्रहण नहीं करूँगी तो मैं पक्का जानती हूँ कि वह प्राण जाने पर भी यह ब्याह न कर सकता। विनय के मन को मैं क्या जानती नहीं?" कहते-कहते आनंदमई ने ऑखों के कोने से ऑसू पोंछ लिए। विनय की ओर से गोरा के मन में भी जो गहरी पीड़ थी वह उमड़ आई। फिर भी उसने कहा, "माँ, तुम समाज में रहती हो और समाज की ऋणी हो, यह बात तुम्हें याद रखनी होगी।"

आनंदमई ने कहा, "गोरा, मैंने तो बार-बार तुमसे कहा है कि समाज से मेरा नाता दिनों से टूट गया है। इसीलिए तो समाज मुझसे घृणा करता है और मैं भी उससे दूर रहती हूँ।"

गोरा ने कहा, "माँ, तुम्हारी इसी बात से मुझे सबसे अधिक तकलीफ होती है।"

अपनी छलछलाती हुई स्निग्ध दृष्टि से आनंदमई ने जैसे गोरा का सर्वांग सहलाते हुए कहा, "बेटा, ईश्वर जानते हैं, तुझे इस तकलीफ से बचाना मेरे बस में नहीं है।"

उठते हुए गोरा ने कहा, "तब फिर मुझे क्या करना होगा, यह तुम्हें बता दूँ। मैं अभी विनय के पास जाता हूँ, जाकर उससे कहूँगा कि अपने विवाह के मामले में तुम्हें उलझाकर समाज से तुम्हारे विच्छेद को और बढ़ावा न दे- क्योंकि यह तो उसकी सरासर ज्यादती और स्वार्थपरता होगी।"

हँसकर आनंदमई ने कहा, "अच्छा, तू जो कर सके कर ले- उसे जाकर कह दे, फिर मैं। देख लूँगी।"

आनंदमई गोरा के चले जाने पर बहुत देर तक बैठकर सोचती रहीं। फिर धीरे-धीरे उठकर पति के कक्ष में चली गईं।

आज एकादशी थी, इसलिए कृष्णदयाल ने भोजन बनाने का कोई यत्न नहीं किया था, उन्हें घेरण्ड-संहिता का एक नया बंगला अनुवाद मिल गया था, उसी को हाथ में पकड़े एक मृगछाला पर बैठे वह पाठ कर रहे थे।

वह आनंदमई को देखकर असमंजस में पड़ गए। आनंदमई उनसे काफी दूरी रखती हुई कमरे की देहरी पर ही बैठ गईं और बोलीं, "देखो, बड़ा उदासीन भाव हो रहा है!"

कृष्णदयाल सांसारिक न्याय-अन्याय से परे जा पहुँचे थे, इसीलिए उन्होंने उदासीन भाव से पूछा, "कैसा अन्याय?"

आनंदमई ने कहा, "गोरा को अब और एक दिन भी धोखे में रखना ठीक नहीं है- बात की हद होती जा रही है।

जिस दिन गोरा ने प्रायश्चित की बात उठाई थी उस दिन कृष्णदयाल के मन में भी यह बात आई थी कि,.... किंतु फिर योग-की तरह-तरह की प्रक्रियाओं के कारण उन्हें इस बारे में सोचने का अवकाश ही नहीं मिला।

आनंदमई ने कहा, "शशिमुखी के ब्याह की बात हो रही है, शायद इसी फागुन के महीने में होगा। इससे पहले जब भी घर में कोई सामाजिक कर्म हुआ है किसी-न-किसी बहाने मैं गोरा को साथ लेकर दूसरी जगह चली जाती रही हूँ। इस बीच कोई इतना बड़ा काम भी नहीं हुआ। लेकिन अब शशि के विवाह में उसे कहाँ ले जाऊँगी? अन्याय रोज़ ही बढ़ता जा रहा है, मैं रोज़ दोनों समय भगवान से हाथ

जोड़कर यही माँगती हूँ कि उन्हें जो सज़ा देनी हो सब मुझको ही दें। लेकिन मुझे बड़ा भय लग रहा है- अब और छिपाकर नहीं रखा जा सकेगा। गोरा को कठिनाई होगी। अब मुझे अनुमति दे दो, मैं उसे सारी बात खोलकर कह दूँ-फिर मेरे भाग्य में जो होगा, होगा।"

कृष्णदयाल की तपस्या भंग करने के लिए इंद्रदेव ने यह क्या विघ्न भेज दिया! इधर उनकी तपस्या भी अति घोर हो उठी थी- साँस रोकने में वह असंभव को संभव कर रहे थे, उन्होंने भोजन की मात्रा इतनी कम कर दी थी कि पेट को पीठ से मिला देने का उनका हठ पूरा होने में अधिक समय न था। ऐसे समय यह उत्पात हुआ!

कृष्णदयाल बोले, "क्या तुम पागल हुई हो? वह बात आज प्रकट होने पर मैं तो बड़े संकट में पड़ जाऊँगा- क्या सफाई दूँगा- पेंशन तो रुक ही जाएगी, शायद पुलिस भी तंग करेगी। जो हो गया हो सो हो गया, अब जितना सँभलकर चल सको, चलो-न चल सको तो भी कोई दोष नहीं होगा।"

कृष्णदयाल ने सोच रखा था कि उनकी मृत्यु के बाद जो हो सो हो, पर तब तक वह स्वतंत्र होकर रहना चाहते थे। फिर उनके अनजाने किसका क्या हो रहा है, इसकी अनदेखी करते रहने से ही किसी प्रकार काम चल जाएगा। क्या करना चाहिए, कुछ निश्चय न कर पाकर आनंदमई उदास मुँह लिए उठ खड़ी हुईं। पल-भर खड़ी होकर बोलीं, "तुम्हारा शरीर कैसा हुआ जा रहा है, यह नहीं देखते?"

आनंदमई की इस मूर्खता पर कृष्णदयाज ज़ोर से हँसे और बोले, "शरीर!"

अंत तक इस विषय की चर्चा किसी संतोषजनक परिणाम तक नहीं पहुँची और कृष्णदयाल ने फिर घेरण्ड-संहिता में मन लगाया। उधर बाहर के कमरे में उनके सन्यासी के साथ बैठे महिम उच्च स्वर में परमार्थ-तत्व की चर्चा में लगे हुए थे। गृहस्थ को मुक्ति मिल सकती है या नहीं, अत्यंत विनीत व्याकुल स्वर में यह प्रश्न पूछकर हाथ जोड़कर वह ऐसे एकांत आग्रह और भक्ति से इसका उत्तर सुनने बैठे थे मानो मुक्ति पाने के लिए उन्होंने अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया हो। गृहस्थ को मुक्ति नहीं मिल सकती किंतु स्वर्ग मिल सकता है, सन्यासी यही समझाकर महिम को किसी तरह संतुष्ट करने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन महिम को तसल्ली ही न होती थी। उन्हें मुक्ति चाहिए ही चाहए, स्वर्ग से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं है। किसी तरह कन्या का विवाह हो लेते ही वह सन्यासी की चरण-सेवा करते हुए मुक्ति की साधना में जुट जाएँगे, इस प्रण से उन्हें कोई डिगा नहीं सकेगा। किंतु कन्या का

विवाह तो ऐसा आसान मामला नहीं है-हाँ, यदि बाबा की दया हो जाए तो शायद बेड़ा पार हो सके!

गोरा - Gora in Hindi

1. गोरा अध्याय
2. गोरा अध्याय
3. गोरा अध्याय
4. गोरा अध्याय
5. गोरा अध्याय
6. गोरा अध्याय
7. गोरा अध्याय
8. गोरा अध्याय
9. गोरा अध्याय
10. गोरा अध्याय
11. गोरा अध्याय
12. गोरा अध्याय
13. गोरा अध्याय
14. गोरा अध्याय
15. गोरा अध्याय
16. गोरा अध्याय
17. गोरा अध्याय
18. गोरा अध्याय
19. गोरा अध्याय
20. गोरा अध्याय